देवानां भद्रा सुमतिर्ऋजूयताम्।। ऋ० १/८६/२

9 772395 711007

Impact Factor
7.523

ISSN : 2395-7115
नवम्बर 2024
Vol.-20, Issue-5(1)

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL
UGC Valid Journal (The Gazette of India, Extraordinary Part III, Section 4, Dated July 18, 2018)

वैश्वीकरण के दौर में बदलती सामाजिक व्यवस्था

Guru Nanak Girls College
Sant Pura, Yamuna Nagar

विशेषांक सम्पादक :
डॉ. गीतू खन्ना,
डॉ. अमनदीप कौर

सम्पादक :
डॉ. नरेश सिहाग
एडवोकेट

Publisher :
Gugan Ram Educational & Social Welfare Society (Regd.)
202, Old Housing Board, Bhiwani, Haryana-127021

Scanned with CamScanner

स्व. चौ. गुगनराम सिहाग व उनकी छोटी बहन स्व. श्रीमती गीना देवी के शुभाशीर्वाद से प्रकाशित

JOURNAL OF HUMANITIES, COMMERECE, SCIENCE, MANAGEMENT & LAW

बोहल शोध मञ्जूषा

Bohal Shodh Manjusha

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED
MULTIDISCIPLINARY & MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

Vol. 20 **ISSUE-5(1)** **(नवम्बर 2024)** **ISSN : 2395-7115**

प्रेरणा :

चौ. एम. सिहाग

विशेषांक सम्पादक :

डॉ. गीतू खन्ना,

डॉ. अमनदीप कौर

सम्पादक :

डॉ. नरेश सिहाग 'बोहल', एडवोकेट

एम.ए. (समाजशास्त्र, लोक प्रशासन, हिन्दी शिक्षा शास्त्र, पत्रकारिता),
एम.फिल (समाजशास्त्र, हिन्दी) एम. लिब., एल-एल.बी. (ऑनर्स),
डिप्लोमा पंचायती राज (रजत पदक विजेता), पी.एच.डी. (हिन्दी)
डी.लिट् (मानद उपाधि), काठमांडू, नेपाल
विभागाध्यक्ष हिन्दी एवं शोध निर्देशक
टाँटिया विश्वविद्यालय, श्रीगंगानगर-335001 (राज.)

प्रकाशक :

गुगनराम एजुकेशनल एण्ड सोशल वैलफेयर सोसायटी (रजि.)

202, पुराना हाऊसिंग बोर्ड, भिवानी-127021 (हरियाणा)

Scanned with CamScanner

अनुक्रमाणिका – नवम्बर 2024

क्र.	विषय	लेखक	पृष्ठ
1.	सम्पादकीय	डॉ. गीतू खन्ना, डॉ. अमनदीप कौर	11–11
2.	शुभकामना संदेश		12–15
3.	हिन्दी साहित्य में नारी चित्रण	डॉ. गीतू खन्ना	16–22
4.	वैश्वीकरण के दौर में भारतीय शिक्षा संस्कृति और साहित्य	डॉ. शक्ति बुद्धिराजा	23–27
5.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में चित्रित परिवर्तित होता पारिवारिक ढांचा	डॉ. अंजू बाला	28–35
6.	वैश्वीकरण का अवधारणात्मक विकास व महिला सशक्तिकरण	संदीप कौर	36–39
7.	वैश्वीकरण के दौर में विखंडित होते जीवन और मानवीय मूल्य : हिन्दी उपन्यासों के सन्दर्भ में	डॉ. अमनदीप कौर	40–45
8.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	मिस दीपमाला	46–50
9.	वैश्वीकरणसमये वेदनिहितसामाजिकसिद्धान्तविचारः	अजित कुमार नायक	51–54
10.	साहित्य में वैश्वीकरण का प्रभाव : शरद जोशी और रवींद्रनाथ त्यागी के व्यंग्यात्मक दृष्टिकोण का विश्लेषण	अर्चना बारस्कर	55–60
11.	वैश्वीकरण के दौर में विखण्डित होते जीवन मूल्य 'गिलिगडु' उपन्यास के संदर्भ में	बीना मीणा	61–64
12.	वैश्वीकरण के दौर में दिविक रमेश के बाल कथा साहित्य में चित्रित बाल समस्याएं	दीपिका चौहान, डॉ. रीता सिंह	65–69
13.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	धीरेंद्र प्रताप सिंह गौर	70–76
14.	The Impact of Technology on Mental Health of Young Adults : A Systematic Review	Ms. Divya Rathi, Dr. Nirupma Saini, Dr. Vandana Singh	77-84
15.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ आदित्य प्रकाश	85–89
16.	वैश्वीकरण के दौर में साहित्य में वर्णित वर्तमान भारतीय शिक्षा व्यवस्था	डॉ. अमिता रेढू	90–97
17.	भूमण्डलीकरण और हिन्दी भाषा	डॉ० चन्द्रा खत्री, डॉ० आशा हर्बोला	98–100

Scanned with CamScanner

संपादकीय......

भारतीय सभ्यता व संस्कृति सम्पूर्ण मानव समाज की अमूल्य निधि है। यह अपनी समस्त आभा और प्रतिभा के साथ चिरकाल से स्थायी है। भारत का ऐतिहासिक व भू–सांस्कृतिक परिवेश सदियों से अपनी विरासत को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित करते हुए सुरक्षित एवं सवर्धित रहा है। साहित्य संस्कृति की विरासत को संरक्षित कर पुनर्जागरण लाने में मदद करता रहा है।

वर्तमान वैश्वीकरण के दौर में पाश्चात्य सभ्यता ने भारतीय परिवेश पर अपना गहरा प्रभाव डाला है और सामाजिक व्यवस्था को परिवर्तित करते हुए उसे बहुत गहरे तक प्रभावित किया है। जिसने प्रगति के नाम पर सभ्यता व संस्कृति में मेरुदंड के रुप में समाहित भारतीय राजनीति, शिक्षा व्यवस्था, अर्थ व्यवस्था पारिवारिक व सामाजिक संबंध, नैतिक मूल्य, रीति–रिवाज, खान–पान संस्कृति के साथ ही धार्मिक व सांस्कृतिक व्यवस्था के साथ अन्य आयामों को भी प्रभावित किया है जिसका सीधा प्रभाव हमारे रहन सहन, विखंडित जीवन मूल्य, संबंध विच्छेद, नशावृत्ति, विदेश वृत्ति इत्यादि नानाविध विसंगतियां समाज को प्रभावित कर रही है।

बढ़ता हुआ भूमंडलीयकरण, बाजारवाद और वैज्ञानिक प्रगति के परिणामस्वरूप हमारे आध्यात्मिक मूल्यों को भी जकड़ लिया है। जिसकी जगह अब घरों सांझा चूल्हा न होकर zomato और swiggi ने पैर पसार कर घर के सकून से दूर भटकाव ने जगह ली हैं। एक के साथ तीन फ्री के बाजार ने हमारे जीवन में संतुष्टि को निशान मिटा दिया। World Wide Web के जाल ने कर लो दुनिया मुठ्ठी में का नारा देकर तो न हमारे शब्दों और न अर्थ का कोई मूल्य रहा केवल झूठे (दोगले व्यतित्व और अहम) बोलवाला को ही बल दिया।

इसलिए आज आदर्श संस्कृति मानवीय जीवन की नई सभ्यता के अनुरूप आवद्ध नहीं हो सकती, क्योंकि नई सदी का मानव उन पुरानी चौखटों को तोड़ देना चाहता है। वास्तव में हमारी विरासतें हमें पूर्वजों से उपहार स्वरूप प्राप्त हुई है जो हमें एक बेहतर इंसान बनने और सामंजस्यपूर्ण उत्थान में हमारा पक्ष लेती है। भारतीय समाज सदैव कला, धार्मिक मान्यताओं और दार्शनिक आदशों से प्रभावित रहा है। अतः वर्तमान भारतीय संस्कृति जिस संक्रमणकाल से गुजर रही है ऐसे में मनुष्य के लिए जो मंगलमय हो, उसके संरक्षण व सांस्कृतिक विरासत एवं परम्पराओं को संरक्षित करने के प्रयास के लिए 'वैश्वीकरण के दौर में बदलती सामाजिक व्यवस्था' विषय पर शोध पत्रों का प्रकाशन किया जा रहा है।

मुझे आशा है ये जर्नल में प्रकाशित पत्र सभी वर्ग के पाठक और श्रोताओं के लिए ज्ञानवर्धक रहेंगे। देश भर के विभिन्न क्षेत्रों के विश्वविद्यालयों के सभी प्रवक्ताओं और शोधार्थियों का आभार व्यक्त करती हूं जिन्होंने अपने शोधपत्र जर्नल में प्रकाशित करने के लिए भेजें। बहुत–बहुत बधाई।

–डॉ. गीतू खन्ना
विभागाध्यक्षा, हिन्दी विभाग, गुरु नानक गर्ल्स कॉलेज,
संतपुरा, यमुनानगर (हरियाणा)
geetugngcollegeynr@gmail.com

Scanned with CamScanner

www.bohalshodhmanjusha.com
Impact Factor : 7.523

Bohal Shodh Manjusha ISSN : 2395-7115
Nov. 2024 Page No. : 16-22

AN INTERNATIONAL PEER REVIEWED, REFEREED MULTIDISCIPLINARY
& MULTIPLE LANGUAGES RESEARCH JOURNAL

हिंदी साहित्य में नारी चित्रण

डॉ. गीतू खन्ना
असिस्टेंट प्रोफेसर, गुरूनानक गर्ल्स कॉलेज, संतपुरा, यमुनानगर, हरियाणा।

वैदिक युगीन गौरवमयी सामाजिक व्यवस्था में शीर्षस्थ एवं अति सम्मानीय पद पर सुशोभित नारी रामायण काल में कुछ अपना अस्तित्व विकृत करने ही वाली थी किन्तु समय रहते हुए मर्यादा पुरुषोत्तम श्रीराम की शासन व्यवस्था ने शौर्यपूर्ण सामाजिक परिवर्तन को पुनः सुव्यवस्थित करके वही स्थान स्त्री को प्राप्त करवाया जो वैदिककाल में था। इसी वजह से किंवदन्ती है कि रामराज्य ग्यारह वा चौदह लाख वर्षों तक चला। वह स्थिति उस समय होने वाले सामाजिक बदलाव को पुनः काबू में करने की थी। वस्तुतः राम द्वारा राज्य तो उतना ही किया गया जितनी उस काल में मनुष्यों की आयु थी किन्तु लाखों वर्षों तक सिस्टम वही था। जो राम के शासन काल में था। इसलिए लाखों वर्षों तक राम राज्य चला और उसमें स्त्रियों की स्थिति वही थी। जो वैदिक युग में थी। किन्तु महाभारतकाल में स्त्रियों की स्थिति अत्यन्त विकराल बन गई थी, जिसका वर्णन मध्ययुग में स्त्री विमर्श में कर चुके हैं, उस विकरालता का दंश स्त्रियाँ आज तक भी भुगत रही हैं। महाभारतकालीन साहित्य से लेकर बौद्ध साहित्य, जैन साहित्य, पुराण साहित्य सिद्ध, नाथ, आदिकाल, भक्तिकाल और रीतिकाल में अनेक डुबकियाँ लगाने के पश्चात् 1857 की क्रान्ति से कुछ साहस बटोरकर अपनी नौका को सम्हालने में तथा स्वतंत्रता तक आते–आते अपने अधिकारों के लिए स्त्री कुछ जागरुक हुई।

वैदिक साहित्य में कई स्थानों पर कई मंत्रों में आया है कि स्त्री जागरुक हों लेकिन व्यथा यह थी कि सम्पूर्ण विश्व में कोई जागरुक नहीं था या वैदिक नियम उखाड़ फेंके थे। ऐसी दशा में जागरुकता की बात करना जरा कठिन था। आज जागरुक हैं किन्तु पूरी तरह नहीं। 'आधुनिक युग में ब्रह्म समाज, प्रार्थना समाज और आर्य समाज ने पुराने धर्म को नये समाज के अनुरूप ढालने का प्रयास किया। ब्रह्म समाज और प्रार्थना समाज ने तो नये परिवर्तनों को स्पष्ट रूप से अंगीकार कर लिया, पर आर्य समाज वैदिक धर्म के मूल स्वरूप को बनाये रखना चाहता था। किन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं है कि आर्य समाजी वैदिक युग की रीति–नीतियों में लौट जाना चाहते थे। उस समय की राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विचारधारा पर आर्य समाज का विशेष प्रभाव पड़ा। पहला प्रयास था कि खोई हुई संस्कृति को पुनः प्राप्त कर राष्ट्र संगठित करना। उस समय ब्रह्म समाज की स्थापना कर राजाराम मोहनराय ने भी अमानवीय एवं राष्ट्र विरोधी ताकतों का विरोध करने का संकल्प किया। इसमें सती प्रथा विरोध उनका मुख्य कार्य स्त्रियों के प्रति था। उनका ज्ञान अरबी एवं फारसी में अधिक था और वे अंग्रेजियत झुके हुए थे। समाज ने भी मनुष्य की समानता, अन्तरजातीय विवाह तथा स्त्री जागरण की लहर 1857 से प्रारंभ होकर अनेक महापुरुषों के प्रयास से आगे बढ़ी तथा रीतिकालीन मानसिकता से ऊपर उठती हुई

Scanned with CamScanner

पुरानी विचारधारा से मुक्त नये आयामों को छूति हुई निरन्तर विकास की ओर बढ़ती गई। उसी 'भारतेन्दु–युग की मुख्य विशेषता यह है कि कवियों ने सामाजिक जीवन की उपेक्षा न कर जनता की समस्याओं के निरूपण की ओर पहली बार व्यापक रूप में ध्यान दिया। क्योंकि रीतिकाल में राजाओं और सामन्तों के आश्रय में लिखित दरबारी काव्य में सामाजिक परिवेश के चित्रण की ओर नगण्य रूप में ध्यान दिया गया था। इसीलिए भारतेन्दु–युग में नारी–शिक्षा, विधवाओं की दुर्दशा, अस्पृश्यता आदि को लेकर जो सहानुभूतिपूर्ण कविताएँ लिखी गयीं। उनके प्रतिपाद्य की नवीनता ने सहृदय–समुदाय को विशेष रूप से आकृष्ट किया।'

इस काल में स्त्रियों की समाज में स्थिति की ओर चिन्ता व्यक्त कर साहित्यकार उसके सभी पक्षों को लेकर रचनाएँ कर रहे थे। साथ में भक्ति भावना, राष्ट्रीयता, सामाजिक चेतना, श्रृंगारिकता, प्रकृति चित्रण, हास्य व्यंग्य आदि पर भी लेखकों का पूरा ध्यान गया। भारतेन्दु जी के नाटकों में स्त्री सुधार की ओर ध्यान गया है। भारतेन्दु हरिश्चन्द्र के समकालीन कवियों ने भी अपने साहित्य में इस स्त्री जागरण को दर्शाया है इसमें बद्रीनारायण चौधरी 'प्रेमधन' प्रताप नारायण मिश्र, अम्बिकादत्त व्यास, आदि। नारी जीवन की मान्यताएँ बदल स्त्री स्वतंर्त्य सम्बन्धी भावनाओं का विकास नवयुग की चेतना के विकास के साथ ही हुआ था। अब समानता की दृढ़ भावना हो रही थी और इस समानता की चर्चा में ही नारी के प्रति पूत भावनाओं का सहज ही विकास हो रहा था। इस सम्बन्ध में प्राचीन रूढ़ियों में भी नवयुग दर्शन का प्रभाव परिलक्षित हो रहा था। नारीत्व के प्रति उच्च भावना की अभिव्यक्ति करने वाले द्विवेदी युग के चार कवि प्रमुख हैं। श्रीधर पाठक, रामनरेश त्रिपाठी, आयोध्या सिंह उपाध्याय और मैथिलीशरण गुप्त। इन कवियों ने स्त्रियों पर होने वाले अत्याचारों की ओर लोगों का ध्यान आकृष्ट किया।

श्रीधर पाठक ने स्त्री को इन अत्याचारों से बचाने के लिए ईश्वर से प्रार्थना की है जो आधुनिक हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श के विकास का है।

'प्रार्थना अब ईश की सब करहु कर जुगजोर।
दीनबन्धु सुदृष्टि की जै बाल–विधवा ओर।।'

रामनरेश त्रिपाठी ने प्रेम की कितनी स्वच्छ छवि प्रकाशित की है। यदि इस प्रकार स्त्री–पुरुष प्रेम को समझे तो स्त्री–पुरुष वाकई में एक सिक्के के दो पहलू बनने में कोई हानि नहीं। प्रिय प्रवास में एक स्थल पर अयोध्या सिंह उपाध्याय नारी के अधिक गंभीरता से समझने के लिए नारी को ही उपयुक्त मानते हैं– विकास हो रहा था। उसका जो स्वरूप मध्य युग में नजर आता था वह अब सुधरने लगा था। नारी को भोग एवं तिरस्कार की वस्तु न मानकर उसके प्रति श्रद्धा के भाव हिन्दी साहित्य में जागृत हो रहे थे। इस जागरण काल में नारी के प्रति तथा उसके दुःखों के प्रति साहित्यकारों को बड़ी चिन्ता थी। जयशंकर प्रसाद ने भी नारी के प्रति यही भाव प्रकट किए हैं :–

'नारी तुम केवल श्रद्धा हो, विश्वास–रजत–नग पदतल में,
पीयूष स्रोत सी बहा करो जीवन के सुन्दर समतल में।'

भले वास्तविक जीवन में नारी की पीड़ा कम नहीं हुई हो परन्तु साहित्य में तो उसे उच्च स्थान मिल चुका था। वास्तविक जीवन का कष्ट एवं कठिनाईयाँ हिन्दी साहित्य में स्त्री जागरण के रूप में उसकी समस्याओं को स्पष्ट रूप से दिखाया जा रहा था। प्रेमचन्द अपने साहित्य में सेवासदन से लेकर गोदान तक सुमन, सोफिया,

Scanned with CamScanner

निर्मला, धनिया, झुनिया, सीलिया, मालती जैसे स्त्री चरित्रों के माध्यम से स्त्री जीवन की नाना छवियाँ प्रस्तुत करते हुए उनमें विद्रोह, संयम, साहस, दृढ़ता का सम्यक निर्वाह करते हैं किसी स्त्री चरित्र में उन्होंने छिछोरापन नहीं दिखाया है। छायावादी कवियों ने भी स्त्रीमुक्ति के सवाल को बड़ी प्रखरता से उठाया। जयशंकर प्रसाद ने अपने नाट्य धूवस्वामिनी में धूवस्वामिनी के रूप में ऐसी स्त्री चरित्र को प्रस्तुत किया जो अनुचित के विद्रोह की मूर्ति है। वह अपने कायर बुजदिल पति रामगुप्त का परित्याग कर जिस–जिस मार्ग का अवलम्बन करती है वह स्त्री विमर्श का विकास है।

धूवस्वामिनी कहती है– 'मैं केवल यही कहना चाहती हूँ कि पुरुषों ने स्त्रियों को अपनी पशु सम्पत्ति समझकर उन पर अत्याचार करने का जो अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता। यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा नारी का गौरव नहीं बचा सकते तो मुझे बेच भी नहीं सकते हाँ तुम लोगों को आपत्ति से बचाने के लिए मैं स्वयं यहाँ से चली जाऊँगी।' ध्रूव स्वामिनी यह बात अपने पति राजा रामगुप्त से कहती है जो अपने शत्रु शकराज को उसे उपहार स्वरूप देकर अपनी जान बचाना चाहता है। पूरा नाटक यही दिखाता है कि कैसे वह अपने कायर पति के इस अनुचित कार्य का प्रतिरोध करती हुई अपनी पसन्द का रास्ता अख्तियार करती है। ऐसे नालायक पति से सम्बन्ध विच्छेद कर वह अपने लायक साथी का चुनाव करती है। पुरुषों के दमन, दलन, उत्पीड़न से मुक्ति के लिए स्त्रियों को स्वयं हिन्दी की कवयित्री सुभद्रा कुमारी चौहान भी बहुत अग्रणी एवं उल्लेखनीय भूमिका में २. उन्होंने राष्ट्रीय भावना को उद्दीप्त करने वाली झाँसी की रानी लक्ष्मी बाई को लेकर कविता लिखकर स्त्री शक्ति के महत्त्व का अहसास कराया, तो पत्नी, माँ, बहन आदि रिश्तों का सम्यक निर्वाह करते हुए स्वराज्य के लिए अनेक बार जेल यात्राएँ भी की। छायावाद की काल्पनिक उड़ान के लिए विख्यात कवयित्री महादेवी वर्मा ने भी स्त्रियों की पीड़ा को स्वयं समझा तथा उस पीड़ा को यत्र–तत्र अपने साहित्य में प्रकट किया है।

स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जिस तरह राजनेताओं से लेकर बुद्धिजीवियों तक में पश्चिमोन्मुखी होने, उनकी नकल करने की प्रवृत्ति बढ़ी, उसी की एक कड़ी के रूप में हमारे यहाँ भी स्त्री मुक्ति आन्दोलन की अलग से चर्चा चल पड़ी। लेकिन यह स्त्री मुक्ति–आन्दोलन पश्चिम के उस स्त्री आन्दोलन से प्रेरित नहीं था जो स्त्रियों के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, समानता स्वतंत्रता के अधिकारों को लेकर चला था। इस स्वातंत्र्योत्तर भारतीय स्त्री आन्दोलन का प्रेरणास्रोत बना पश्चिम में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद नये अंदाज में उभरा स्त्री मुक्ति आन्दोलन जिसके केन्द्र में स्त्रियों की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक आदि क्षेत्रों में व्याप्त असमानताओं से मुक्ति का नहीं, अपितु सिर्फ यौन मुक्ति या यौन स्वच्छन्दता का सवाल महत्त्वपूर्ण हो गया है। जाहिर है यौन स्वच्छन्दता को सर्वोपरि महत्त्व देने वाली या देने वाले, यौन को ही सभी प्रकार की मुक्ति का पर्याय समझने वालों को वास्तविक स्त्री मुक्ति उसके अधिकारों एवं उसकी सच्ची समानता के लिये किये गये प्रयासों से कोई अर्थ न था। वास्तव में सच्ची स्त्री मुक्ति स्त्री–पुरुष, पति–पत्नी के संबंधों में परस्पर निष्ठा, विश्वास, सेवा, त्याग के महत्त्व से प्रतिपादित होना चाहिए। जबकि आज के यौनतावादियों के लिए ये सारे मूल्य बकवास हैं। इन्हें कपड़े बदलने की तरह अपने साथी बदलने की छूट होनी चाहिए। इन्हें पति–पत्नी नहीं सेक्स पार्टनर जैसे शब्द अच्छे लगते हैं।

जैसा भी हो स्वतंत्रता के बाद महिला रचनाकारों ने सारे आवरण उतार फेंके। सैद्धान्तिक रूप से नारी

Scanned with CamScanner

ने सारे संवैधानिक अधिकार प्राप्त कर लिए परन्तु लिंग–भेद आर्थिक–वैषम्य, नैतिकता ह्रास तथा दोहरे मूल्यों की वजह से समाज की जड़ मानसिकताओं में कोई परिवर्तन नहीं आया। नारी अब और अधिक बौद्धिक और जागरूक हो गई है फिर भी उसका स्थान दलित, शोषित और पिछड़े वर्ग के साथ है। जब महादेवी या इस्मत चुगताई स्त्री के पक्ष में जाँच पड़ताल कर रही थी तब पश्चिम में नारीवादी आन्दोलन का प्रारंभ नहीं हुआ था। श्रृंखला की कड़ियाँ और अन्य कृतियों में महादेवी ने स्वतंत्र भारतीय स्त्री के स्वर को वाणी दी। उन्होंने अपने अधिकारों के प्रति सजग नारी तथा उपेक्षित उत्पीड़ित नारी की करने की गुहार प्रसाद ने सन् सत्तर अस्सी में जर्मेन ग्रीयर, सीमोन दबोउवा स्त्रियों के अन्दर फूटती विद्रोह की नाचना के लिए क्रान्ति का मार्ग प्रशस्त करती हैं।

मन्नू भण्डारी का 'आपका बन्टी', अमृता प्रीतम की रचना 'रसीदी टिकट', कृष्णा सोबती का 'सूरजमुखी अँधेरे के', 'मित्रो मरजानी' और 'जिन्दगी नामा' जैसी कृतियाँ सामाजिक संरचना के स्त्री विरोधी रवैये को तीव्र प्रतिक्रियावादी आक्रोश के साथ व्यक्त करती हैं। मृदुला गर्ग के 'उसके हिस्से की धूप', 'चितकोबरा', 'कठगुलाब' और 'अनित्य' में व्यापक सामाजिक सन्दर्भों से जुड़ने का प्रयास दिखाई देता है। प्रभा खेतान का 'छिन्नमस्ता', 'पीली आंधी', राजी सेठ का 'तत्सम' मंजुल भगत का 'अनारो', शशिप्रभा शास्त्री का 'सीढ़ियाँ', मेहरूनिशा परवेज का 'अकेला पलाश', नासिरा शर्मा का 'ठीकरे की मंगनी', 'शाल्मली', सूर्यबाला का 'मेरे संधिपत्र' अलका सरावगी का 'कलि कथा वाया बाइपास', गीतांजलि श्री का 'तिरोहित', नमिता सिंह का 'अपनी सलीबें' तथा दीप्ति खण्डेलवाल की 'प्रतिध्वनियाँ', चित्रा मुद्गल का आवाँ और 'अपनी जमीन' आदि कृतियाँ हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श से जोड़ती हुई स्त्री जीवन की विसंगतियों और विडम्बनाओं को परत–दर–परत उधेड़ कर उजागर कर देती हैं। भारतीय समाज में आज भी स्त्री जीवन में प्रेम विवाह और गृहस्थी की समस्याएँ महत्त्व रखती हैं।

उक्त साहित्यकारों का लेखन स्त्री अधिकारों के प्रति सजगता आक्रामकता तथा तीखेपन से भरा है। आजादी के बाद के बिखराव और रिश्तों की टूटन और बिखरन के जितने प्रमाणिक दस्तावेज इन रचनाकारों के साहित्य में मिलते हैं वे विचार करने योग्य हैं। इनकी रचनाओं में पारिवारिक, सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और मनोवैज्ञानिक धरातल पर जीवन को विविध कोणों से देखने तथा विडम्बनीय स्थितियों को प्रतिबिंबित करने की जो सजगता और संवेदनशीलता दिखाई देती है वह स्वतंर्त्योत्तर साहित्य में अपना एक स्थान रखती है।

आजादी के पहले व आज के महिला लेखन के तेवर में निश्चित ही बड़ा फर्क है। आजादी से पहले की सुभद्रा कुमारी चौहान, महादेवी वर्मा हर सामाजिक रचनात्मक आन्दोलन में बराबरी के स्तर पर शामिल रही। अपने समय के जोखिम उठाए। वह एक स्वस्थ परम्परा में संभव हो सका जो दुर्भाग्य से आज नहीं है। नारी की सामाजिक स्थिति परिवार की भीतरी संरचना में गुंथी है। एक ओर वह माँ, बहिन, पत्नी और पुत्री है तो वह समाज में भी अपनी बौद्धिक क्षमता और प्रतिभा को स्थापित करना चाहती है। उसकी स्वाभिमानी चेतना और मुक्ति की छटपटाहट ने स्त्री विमर्श के विकास को सशक्त हिन्दी साहित्य में स्त्री विमर्श के विकास में स्त्री रचनाकारों की संवेदनशील अभिव्यक्ति व साहसिक आत्मस्वीकृतियाँ कई मायनों में चौंकाने वाली हैं। उन्होंने स्त्री होने के नाते जिस गहराई और बारीकी से स्त्री जीवन की व्यथा, जरुरतों, अधिकारों व माँगों पर विचार किया है वह पुरुष रचनाकारों की तुलना में कहीं अधिक सूक्ष्म और प्रभावक है यही कारण है कि साहित्य की विभिन्न विधाओं में स्त्री रचनाकारों में स्त्री विमर्श को व्यापक धरातल प्रदान किया है।

Scanned with CamScanner

अनामिका की कविता 'दरवाजा' में कवयित्री ने स्त्री की पीड़ा को इस तरह अभिव्यक्त किया है :-

'मैं एक दरवाजा थी,
मुझे जितना पीटा गया मैं उतना खुलती गई
खुदा ने कलम रख दी
और कहा-
'औरत है, उसने यह गलत नहीं कहा।'

अनामिका की कविता 'बेवजह' में स्वयं के लिए जगह बनाती स्त्री का चित्रण। समाज में महिलाओं के प्रति एक स्वस्थ दृष्टिकोण को खोजना कठिन है। निस्सन्देह यह एक गंभीर समस्या है। मगर आज की औरत निराश नहीं। यह तप है कि आज से पहले स्त्री और स्त्रीवाद को लेकर विमर्श और व्यवहार के स्तर पर इतनी जोरदार पहल कभी नहीं हुई, जैसी आज हो रही है। 'स्त्रीवाद के अब तक के सफरनामें का यह सबसे अहम पड़ाव है। इन्हीं बदलावों के उजाले में औरत को एक नए ढंग से जानने-समझने की कोशिश है। तेजी से बदल रहे परिवार, समाज और संस्कृति में औरत की जिम्मेदारी और जवाबदेही तो तय है, मगर आज भी उसके अधिकार और स्पेस तय नहीं आर्थिक उदारीकरण और संचार क्रांति ने समाज के ताने-बाने पर अपना व्यापक असर डाला है। परिवर्तन की इस आंधी ने बहुत कुछ बदला है औरत की स्थिति भी इससे अछूती नहीं है वह परिवर्तन के नए आयामों से रूबरू है।'

समाज सुधारकों ने उन्नीसवीं शती में अनुभव कर लिया था कि नारी पर अन्यायपूर्ण सामाजिक रूढ़ियों को थोपना उचित नहीं है, वह शिक्षा ग्रहण कर सके, अपनी इच्छा से उचित आयु में विवाह कर सके विधवाएँ पुनर्विवाह कर सकें और स्त्रियाँ समाज निर्माण के कार्यों और परिवर्तनकारी योजनाओं में महत्त्वपूर्ण निर्णय ले सके, वह अपरिहार्य है। वह स्त्री की मुक्ति के लिए छटपटाहट की कोशिशों को तो पकड़ता ही है, अस्तित्त्व के संघर्ष को भी बारिक नजर से देखता है। 'इक्कीसवी सदी में भारतीय नारी के समक्ष कई नई चुनौतियाँ हैं। भारतीय संविधान ने पुरुष और नारी को समान अधिकार दिए हैं, इसलिए उन अधिकारों को संवैधानिक आश्वासन द्वारा सुदृढ़ करना जरूरी नहीं है, किन्तु यदि हमारा वास्तविक सामाजिक समानता के उन अधिकारों की अवहेलना करता है तो स्त्री को आगे आकर भी अपने सम्मान को अभिव्यक्ति देनी होगी, किंतु यह व्यक्ति-व्यक्ति पर निर्भर करता है। सब महिलाओं का एक ही सांचे में ढलना न संभव है, न उचित। फिर भी यह तथ्य रेखांकित करना आवश्यक है कि स्त्री का जीवन केवल राजनीति, कैरियर या सामाजिक आन्दोलन से ही सार्थक नहीं होता, अपने पति के जीवन में सार्थक भूमिका निभाना भी उसकी क्षमता और व्यक्तित्व की सार्थकता और प्रशस्ति हो सकती है। मानव नारी और पुरुष समाज की दो स्वतन्त्र इकाईयाँ हैं, अपनी स्वतन्त्र चारित्रिक और प्रवृत्यात्मक पहचान के साथ। किन्तु न जाने कब इतिहास की अंधी गलियों में नारी को पुरुष की छाया और अनुगामिनी बना दिया गया। यह समाज पुरुष सत्ता प्रधान समाज है, नारी का अपना संगठित इतिहास नहीं है, जैविक दृष्टि से भी वह कोमलंगी है, अतः वह दोयम दर्जे की नागरिक बना दी गई।

वस्तुतः नारी की अस्मिता इन्हीं अन्तर्विरोधों और असमता के प्रति बदलाव लाना चाहती है उसका स्त्री विमर्श आधुनिक हिन्दी साहित्य में अपना प्रभाव हैं। बौद्धिक रूप से हर चुनौती को स्वीकारने वाली यह स्त्री दोहरी तिहरी भूमिकाएँ निभाते हुए भी अपनी सार्थकता निर्विवाद रूप से नहीं पहचान पाई है? किन्तु एक स्वतंत्र

Scanned with CamScanner

व्यक्तित्व निर्माण की प्रक्रिया में उसके अवचेतन मन की भूमिका ही प्रबल है। साहस और लड़ाई मात्र श्रम और अर्थ के समान धरातल पर ही नहीं होता, बल्कि सदियों से चली आई सांस्कारिक जड़ता से भी है, यही व्यक्तिवादी चेतना की खोज है, जिसके द्वारा वह यांत्रिक वस्तु से व्यक्ति में तब्दील होना चाहती है। स्थापित व्यवस्थाओं को तोड़ना आसान नहीं है। हमारे समाज में महिला को ही क्यों श्रेणी में रखा जाता है। पुरुषों के लिए श्रेणी की कमी होती है। यदि कोई पुरुष कार्यालय में कार्य करता है। तो वह एक अच्छा पुरुष हो सकता है। पर यदि कोई पुरुष कुछ भी नहीं करता न कार्यालय में कार्य, न कोई व्यापार, न घर का कार्य तो भी वह सिर्फ और सिर्फ अच्छा पुरुष ही बना रहता है। स्त्री उस समय कार्य कुशलता का परिचय दे तो अच्छी अन्यया बुरी। यह आग्रह पुरुष प्रधान समाज के सामन्ती संस्कारों के प्रति विद्रोहपरक होते हुए भी दयनीय और समझौता परक रहा है।

अब किसी को यह शंका नहीं होगी कि पितृसत्तात्मक समाज में विवाह, कुटुम्ब और यौनिकता, पुरुष के द्वारा नियन्त्रित और संस्थागत स्वरूप में परिचालित हैं। वहाँ के अधिकारी पुरुष है, उसका काम है कि सबको पराजित करके खुद की स्थापना एवं राजत्व की स्थापना करते रहे। समाज निर्माण में जहाँ नारी की विशेष क्षमताओं का सदुपयोग करना है, वहीं इनके संरक्षण और सुरक्षा के लिए विशेष व्यवस्था भी करनी है। लेकिन बराबरी की दौड़ में जहाँ स्वयं नारी अपनी विशेषताओं को भूलती जा रही है, वहीं पुरुष, समाज और सरकार भी स्त्री–विकास की पुरुष के बराबर की माता–पिता। हराने व हारने की स्थितियों में गुजरते हुए इस संस्था की अंदरूनी वृत्तियों का पर्दाफाश किया गया तो यह साफ हो गया कि इस संस्था को चालू रखने के लिए स्वामी के अलावा सब किसी का दान, त्याग व योगदान की जरूरत है। यदि स्वामी भी लोकतंत्रीय जीवन के भरोसेमन्द हैं तो उन्हें भी अपने समाज द्वारा प्रख्यापित श्दायित्वोंश को निभाने हेतु त्याग करना होगा। न चाहने पर भी उन्हें परिवार को रखना होगा, पत्नी को सहना होगा, छिप–छुपकर अपने को बचाते रहना होगा। झुंझलाहट, खीझ, घुटन व तड़प की आत्मकथाएँ इस तरह रचीं जाने लगीं, मगर कोई आसार नहीं मिला। वर्षों के दांपत्य–जीवन को आत्मप्रवंचना का कालखंड मनाने वाले काफी लोग हैं।'

नारी मुक्ति आन्दोलनों ने भारतीय नारी को भी आकर्षित किया है और अनेक महिला संगठनों ने इसे बढ़ावा भी दिया है। पश्चिम सेकुछ स्थितियाँ मुहैया कराकर, कुछ कानून बनाकर, और महिला आयोग बनाकर निश्चित किया गया आयातित इस भावना ने पुरुष की प्रतिस्पर्धा में नारीत्व, पत्नीत्व के साथ मातृत्व को भी नकारा है किन्तु जागरण और चेतना का प्रमुख लक्ष्य रखते हुए क्रान्तिकारी स्त्रियों ने पुरुषों की अंधी नकल की। उनकी वेशभूषा, खुलापन, शराब, सिगरेट के साथ वर्जना रहित जीवन और अस्वाभाविक पौरुष का प्रदर्शन इन सब ने नारी को अधिक दिग्भ्रमित किया है। वरतुतः समाज के विकास में अपनी भूमिका निर्धारण के लिए पहली शर्त है। स्वयं में आत्मविश्वास और अपनी क्षमताओं की पहचान। नारीत्व को नकारे बिना हीन–भावना को दूर करना। जिस प्रकार पुरुष स्वयं इतिहास गढ़ता है, उसी प्रकार समाज में स्वयं को प्रतिष्ठित करने प्रयत्न करना।

सार्वभौमिक दृष्टि में स्त्री मुक्त है, वह पूर्ण रूप से मुक्त है। बस इतना करना आवश्यक है कि वह देश, काल, वातावरण को देखते हुए अपने आप में कितना आत्मबल विकसित कर सकती है, सवाल यहाँ आकर ठहरता है। जहाँ–जहाँ उसका आत्म बल विकसित हुआ है वहाँ–वहाँ वह मुक्त है, किन्तु जब यदि उसे अपना अत्म बल बढ़ाना न आता हो वह वहाँ–वहाँ स्वयं ही पराधीन एवं आतंकित है। मार्ग उसके लिए खुले हुए हैं करना है तो उसे विकसित अपना शिष्ट समुन्नत रूप।

हिन्दी साहित्य में स्त्री–विमर्श का विकास सतत गतिमान है और इसके अभी और अधिक विकास की संभावनाएं बाकी है।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची :-

1. नया ज्ञानोदय (मासिक पत्रिका)
2. हिन्दी साहित्य का इतिहास सं. डॉ. नगेन्द्र।
3. हिन्दी साहित्य की प्रवृत्तियों डॉ. जयकिशन प्रसाद खण्डेलवाल, विनोद पुस्तक मंदिर आगरा–2।
4. आदमी की निगाह में औरत राजेन्द्र यादव।
5. स्त्री उपेक्षिता : प्रभा खेतान, भूमिका।
6. कहती हैं औरतें : अनामिका।
7. दयानंद सरस्वती का स्त्री विमर्श उसका आधुनिक हिन्दी साहित्य।
8. स्त्री अस्मिता और समकालीन कविता प्रमिला।
9. हम सभ्य औरतें मनीषा।
10. इस्पात में ढलती स्त्री शशिकला राय।
11. भारतीय नारी जीवन की कहानियाँ प्रेमचंद।
12. स्त्री मुक्ति संघर्ष और इतिहास रमणिका गुप्ता।
13. स्त्री विमर्श का कालजयी इतिहास डॉ. संजय।
14. पिछले पन्ने की औरतें शरद सिंह।
15. आधी दुनिया का सच कुमुद शर्मा, नारी शोषण : आइने और आयाम।

geetuhindidept@gmail.com

Scanned with CamScanner